भारतीय ज्ञान परंपरा

संस्कृति, दर्शन, शैक्षिक विचारधाराएँ और नवाचार

सम्पादक :
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

भारतीय ज्ञान परंपरा :

संस्कृति, दर्शन, शिक्षा विचारधाराएँ और नवाचार

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

Ph.D., D.Lit. (Sub.)

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,
अजमेर

छवि पब्लिकेशन्स

अजमेर-305001

प्रकाशक :
छवि पब्लिकेशन्स
अजमेर-305001
मो. 9660111549

संस्करण :
प्रथम 2022-2023

ISBN : 978 - 81 - 89435 - 64 - 6

मूल्य - 300/-

रचना - भारतीय ज्ञान परम्परा में शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

26. राजस्थानी लोकगीत और लोक संस्कृति के विभिन्न पक्षों की विवेचना

सीमा शर्मा
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

राजस्थान लोकसंस्कृति का जीवंत केंद्र रहा है। यहाँ की लोकसंस्कृति, लोकव्यवहार और लोककथाएँ आपस में गहरे रूप से जुड़ी हुई हैं। जीवन का ऐसा कोई भी पक्ष नहीं है, जिस पर लोकगीतों और लोककथाओं की अमिट छाप न पड़ी हो। वास्तव में राजस्थान का लोकसाहित्य अत्यंत सरल, सरस, भावनापूर्ण तथा बहुआयामी है। यह एक विशिष्ट और अद्वितीय सांस्कृतिक धरोहर है, जिसकी झलक गाँवों से लेकर नगरों तक सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है।

राजस्थान की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनीतिक चेतना इस लोकसाहित्य में गहराई से प्रतिबिंबित होती है। लोकजीवन की मान्यताएँ, परंपराएँ, आस्थाएँ और लोकधारणाएँ इन रचनाओं के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी संप्रेषित होती रही हैं।

राजस्थानी लोकसाहित्य के अनेक अंग हैं— जिनमें लोकगीत, लोकगाथाएँ, सुभाषित, लोककथाएँ, कहावतें तथा पहेलियाँ प्रमुख हैं। लोकगीतों में जहाँ जनजीवन की भावनाओं का ममज़्स्पशीज़ चित्रण होता है, वहीं लोकगाथाएँ राजस्थान के वीरत्व, प्रेम और लोकमूल्यों की गौरवशाली परंपरा का बोध कराती हैं।

लोकगीतों की परिभाषा और स्वरूप के विषय में विद्वानों के भिन्न-भिन्न मत हैं। डॉ. मनोहर शर्मा तथा श्री मोहनलाल पुरोहित जैसे साहित्यकारों ने अपने शोध और लेखन में राजस्थानी लोकगीतों की विविधता, लोकभावना और सांस्कृतिक महत्ता का विशद विवेचन किया है।

पैटी के अनुसार ''लोकगीत आदि मानव का उल्लासमय संगीत है।'' सिजविक ने कहा है कि ''लोकगीत की सृष्टि साहित्य और वणज़्माला की सृष्टि से भी पहले की है।'' अर्थात् यह मानव की प्राचीनतम अभिव्यक्ति है। महात्मा गांधी ने लोकगीतों को 'जनता की भाषा' कहा है, क्योंकि इनमें जनजीवन की भावनाएँ, आस्थाएँ और संस्कार झलकते हैं। लोकगीत केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि समाज के हृदय के

स्वाभाविक उद्‌गार हैं।

'फोक-सॉन्ग' शब्द जर्मन "Volkslied" से निकला है, जिसका अर्थ है— जनता का गीत। ग्रिम के अनुसार, ''लोकगीत अपने आप बनते हैं।'' ये किसी एक व्यक्ति की नहीं, बल्कि जनसमूह की सामूहिक सृष्टि होते हैं।

लोकगीतों में उस क्षेत्र के लोगों का रहन-सहन, रीतिरिवाज, प्रेम, दुख-सुख और सामाजिक समस्याएँ झलकती हैं। वास्तव में लोकगीत हमारे लोकजीवन और संस्कृति के जीवंत प्रतिबिंब हैं — इनके बिना संस्कृति अधूरी है।

यहाँ दिए गए अंश का परिष्कृत और संक्षिप्त रूप इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है —

एजरा पाउंड का यह कथन — ''सफल साहित्य अपने युग का परिचायक अवश्य होता है, पर वह मात्र सामयिक नहीं होता'' लोकगीतों पर पूर्णतः लागू होता है। लोकगीत अपने समय के समाज, संस्कृति और जीवन मूल्यों का सजीव दर्पण होते हैं।

श्री देवेंद्र सत्यार्थी के अनुसार, लोकगीतों में गाँव का जनजीवन बोलता, हँसता, रोता और गाता है। इनमें किसान का श्रम, स्त्रियों की भावनाएँ, ऋतु-पर्वों का उल्लास, और जीवन के सुख-दुःख सब कुछ झलकता है। लोकगीत समाज की समस्याओं— जैसे कर, बेगार, सूखा, बाढ़, या अन्य कष्टों पर भी व्यंग्य और पीड़ा के साथ प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं।

इन गीतों में देवी-देवताओं की आराधना से लेकर प्रेम, हास्य, व्यंग्य और जनआंदोलनों तक की भावनाएँ समाहित हैं। इस प्रकार, लोकगीत केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना और जनभावनाओं के जीवंत दस्तावेज हैं।

हालरिया

राजस्थान की समृद्ध लोक सांस्कृतिक परंपरा में हालरिया या हालरियाँ विशेष स्थान रखती हैं। ये वे लोकगीत हैं जो शिशु-जन्म के अवसर पर आनंद, उल्लास और मातृत्व की कोमल भावनाओं के साथ गाए जाते हैं। इन गीतों में नारी की मातृत्व भावना, परिवार का हर्षोल्लास तथा नवजीवन के आगमन की प्रसन्नता का अत्यंत सुंदर चित्रण मिलता है।

राजस्थान के प्रत्येक क्षेत्र में हालरियों का स्वरूप कुछ भिन्न होते हुए भी उनका भाव समान है — ममता, स्नेह और उत्सव का संगम। ये गीत प्रायः घर की स्त्रियों द्वारा सामूहिक रूप में गाए जाते हैं। गीतों में माँ की ममता, पिता का गर्व, परिवार की हँसी और समाज की मंगलकामनाएँ झलकती हैं।

जैसलमेर क्षेत्र में गाई जाने वाली प्रमुख हालरियाँ हैं — दाई, हारळी गीरी, धतूरी, खाँवळी, और खटी लड़ी।

इन गीतों में स्थानीय बोलचाल की मिठास और मरुस्थलीय संस्कृति की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। दाई गीतों में दाई (धाई) के द्वारा नवजात शिशु के जन्म की सूचना, उसके गुणों का बखान और परिवार के सुख की मंगलकामनाएँ गाई जाती हैं। हारळी गीरी और धतूरी गीतों में नवजात के प्रति शुभाशंसा और देवताओं की प्रार्थना होती है। वहीं खाँवळी और खटी लड़ी में परिवार की स्त्रियाँ नवजात के लिए हर्षोल्लास और खेलपूर्ण भावों से गीत गाती हैं।

बीकानेर क्षेत्र में भी बच्चे के जन्म पर विशेष प्रकार की हालरियाँ गाई जाती हैं। इनमें प्रमुख हैं — दाई, गूगहरी, पीळी, अनुवी, और धतूरी माऊणी।

इन गीतों में धार्मिकता, सामाजिकता और स्नेह का समन्वय देखने को मिलता है। गूगहरी गीतों में नवजात के लिए गूगाजी महाराज से आशीर्वाद माँगा जाता है। पीळी गीतों में नवजात के शुभ-संस्कारों का वर्णन होता है। अनुवी और धतूरी माऊणी में परिवारजनों द्वारा नाचते-गाते हुए उत्सव का उल्लास व्यक्त किया जाता है।

राजस्थान के ग्रामीण समाज में आज भी शिशु-जन्म जैसे अवसरों पर हालरियों की गूँज सुनाई देती है, जो लोकसंस्कृति की निरंतरता और जीवन की सहजता का प्रमाण है।

विवाह के गीत

इन्हें 'गणेश', 'गणाधिपति', 'गणपति', 'विनायक' आदि कई नामों से संबोधित किया जाता है।

'विनायक' पीठी (विवाह में वर या वधू को नहलाते समय के गीत), सी बे ळा (घर में प्रथम कोई प्रसाद बनाते समय जब चूल्हे पर कोई बर्तन रख जाए), छोड़ी, कंवळा, रा ळीटीं, बनड़ 1 (श्री सागरमल गोपा, राजस्थानी संगीत, पहला भाग) रेजी, कलंगी, फेंरी, बालेसर, कंथा आदि गीत प्रमुख होते हैं।

इसी प्रकार बीकानेर के लोकगीतों में बनड़ा, विनायक, पीठी, इल्दी, मैंदी, घोड़ी, कामण, बांवी मोलियो आदि गीत बड़े उत्साह के साथ गाए जाते हैं।

'कोयल की सिघचाली' को सुनते समय पत्थर से पत्थर वाले हृदय में आँसू बह उठते हैं। प्रेमी विरह और वेदना को लेकर यह लोकगीत है।

राजस्थान की लोकसंस्कृति में विवाह केवल दो व्यक्तियों का नहीं, बल्कि दो परिवारों और समुदायों का पावन उत्सव होता है। इस उत्सव को गीतों के बिना अधूरा माना जाता है। विवाह के अवसर पर गाए जाने वाले ये लोकगीत आनंद, हास्य, प्रेम, रीतिरिवाज और परंपरा के अद्‌भुत संगम हैं। इन्हें सामूहिक रूप से स्त्रियाँ गाती हैं, जिनमें लोकधुनों की मधुरता और लोकजीवन की सजीवता का सुंदर सामंजस्य दिखाई देता है।

राजस्थान में विवाह से संबंधित लोकगीतों को 'गणेश', 'गणाधिपति', 'गणपति' या 'विनायक' आदि नामों से संबोधित किया जाता है। इन गीतों का गान प्राय: विवाह की प्रारंभिक रस्मों से लेकर विदाई तक किया जाता है। इनमें प्रमुख हैं —

विनायक पीठी :- यह गीत उस समय गाया जाता है जब वर या वधू को नहलाने की रस्म होती है। इसमें मंगलकामनाएँ और पवित्रता की भावना झलकती है।

सी बेला :- जब घर में पहली बार विवाह के प्रसाद के रूप में चूल्हे पर बतज़्न चढ़ाया जाता है, तब यह गीत गाया जाता है। इसमें मंगल और समृद्धि की कामना होती है।

छोड़ी, कंवळा, राळीटीं, बनड़, रेजी, कलंगी, फेंरी, बालेसर, कंथा आदि गीत भी विवाह के विभिन्न अवसरों पर गाए जाते हैं। इन गीतों का उल्लेख श्री सागरमल गोपा की कृति 'राजस्थानी संगीत (पहला भाग)' में भी मिलता है।

बीकानेर क्षेत्र में विवाह अवसरों पर लोकगीतों का विशेष महत्त्व है। यहाँ प्रचलित प्रमुख विवाह-गीत हैं — बनड़ा, विनायक, पीठी, इल्दी, मैंदी, घोड़ी, कामण, और बांवी मोलियो।

इन गीतों में विवाह की रस्मों का वर्णन, दूल्हा-दुल्हन के सौंदर्य का बखान, हास्य-व्यंग्य के प्रसंग और पारिवारिक भावनाओं का मनोहर चित्रण मिलता है।

'कोयल की सिघचाली' राजस्थानी लोकगीतों में अत्यंत मार्मिक गीत है। इसे सुनते समय पत्थर जैसे कठोर हृदय भी द्रवित हो उठते हैं। यह गीत प्रेम, विरह और वेदना से ओतप्रोत है। इसमें लोकनारी की भावनाओं, उसकी प्रतीक्षा और विरह की पीड़ा का अत्यंत करुण चित्रण किया गया है।

राजस्थान के ये विवाह-गीत केवल रस्मों का हिस्सा नहीं, बल्कि सामाजिक एकता और सामूहिक उल्लास के प्रतीक हैं। इन गीतों के माध्यम से स्त्रियाँ अपनी भावनाओं को प्रकट करती हैं, सामाजिक बंधनों में प्रेम और हास्य का रंग घोलती हैं, और आने वाले नवयुगल के जीवन के लिए मंगल कामनाएँ करती हैं।

इन गीतों में लोकभाषा की मिठास, सांस्कृतिक रीतियों की सजीवता और जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण झलकता है। यही कारण है कि विवाह के अवसर पर गाए जाने वाले ये गीत आज भी राजस्थान की लोकसंस्कृति के अमिट प्रतीक बने हुए हैं।

मेले के गीत

राजस्थान की लोक संस्कृति में मेले और उत्सव जनजीवन के उल्लास, आस्था और सामूहिकता के प्रतीक हैं। इन मेलों में गाए जाने वाले गीत लोकभावनाओं, पारस्परिक प्रेम और क्षेत्रीय सौंदर्य के जीवंत प्रमाण हैं। मेले के गीत न केवल मनोरंजन

का माध्यम हैं, बल्कि वे उस समाज के जीवन-संघर्ष, प्रेम, भक्ति और प्रकृति के साथ उसके गहरे संबंध को भी व्यक्त करते हैं।

मरुस्थलीय क्षेत्र जैसलमेर में मेलों का विशेष महत्त्व है। यहाँ के मेले केवल व्यापार या धार्मिक आयोजन नहीं, बल्कि लोकसंस्कृति के उत्सव होते हैं, जहाँ संगीत और गीतों की गूँज पूरे वातावरण को जीवंत बना देती है। इन अवसरों पर प्रचलित प्रमुख मेले-गीत हैं — रिड़मक (या रणमक), मरवा, रायो री रंग, मूमल, फूल जड़ी, मालण, कवारी, लोगों केरी बंगली, सूंवटियो, पणिहारी, कसूवी, नगर उठी।

इन गीतों में मरुस्थल की रेत, लोकनारी का सौंदर्य, प्रेम और प्रकृति का सहज मिलन झलकता है। मूमल जैसे गीतों में राजस्थानी प्रेमकथाओं की गाथा गाई जाती है, जबकि रायो री रंग और फूल जड़ी गीतों में मेले की रंगीनियों और नारी के श्रृंगार का भावनात्मक चित्रण मिलता है।

बीकानेर में मेलों का आयोजन अपेक्षाकृत सीमित रूप में होता है, परंतु इन अवसरों पर गाए जाने वाले गीतों में गहन लोकभावनाएँ निहित हैं। यहाँ के प्रमुख मेले-गीत हैं — भँवर बागी में आइ जोगी, पणिहारी, मूमल, अब घर बावी ए।

इन गीतों में भक्तिभाव, प्रेम, विरह और सामाजिक जीवन के विविध रंग झलकते हैं। विशेष रूप से भँवर बागी में आइ जोगी में प्रेम और भक्ति का सुंदर संगम दिखाई देता है।

राजस्थान के लोकगीतों में 'पणिहारी' सबसे लोकप्रिय गीतों में से एक है। 'पणिहारी' शब्द का अर्थ है— पानी लाने वाली नारी। यह गीत ग्रामीण नारी के श्रम, सौंदर्य, सरलता और जीवन की लय का प्रतीक है।

यह गीत न केवल राजस्थान के प्रत्येक गाँव और नगर में, बल्कि राजस्थान से बाहर असम, बंगाल आदि प्रांतों में भी गाया जाता है। अपने मधुर राग, भावनात्मक कथानक और लोकसंगीत की स्वाभाविक लय के कारण 'पणिहारी' भारत भर में प्रिय और प्रसिद्ध हो चुका है। इसमें नारी का श्रम, प्रेम और लोकजीवन का ममज़ बड़ी सरलता से व्यक्त होता है।

मेले के गीत राजस्थान के जनजीवन के उल्लास का प्रतीक हैं। इनमें सामूहिकता, भक्ति, प्रेम, हास्य और जीवन की सहजता का अद्भुत संगम है। ये गीत दर्शाते हैं कि राजस्थान का लोकजीवन केवल संघर्षमय नहीं, बल्कि उत्सवप्रिय, संवेदनशील और सौंदर्यप्रेमी भी है।

गवर के गीत

राजस्थान में गवर या गणगौर का पर्व लोकजीवन का अत्यंत प्रिय और भावनात्मक उत्सव है। यह पर्व होली के दूसरे दिन से आरम्भ होकर चैत्र शुक्ला तृतीया

या चतुर्थी तक चलता है। इस दौरान पूरा प्रदेश गीतों और लोकधुनों से गूँज उठता है।

गणगौर का पूजन विशेष रूप से स्त्रियाँ करती हैं, जो सौभाग्य, प्रेम और समृद्धि की देवी मानी जाती हैं। इस अवसर पर गवर के गीत अत्यंत उल्लासपूर्ण वातावरण में गाए जाते हैं।

शीतला अष्टमी की संध्या से बालिकाएँ घुड़ला घुमाती हैं — मिट्टी के कुलड़े में दीपक जलाकर, उसके छेदों से प्रकाश निकलता हुआ मोहल्लों में घूमता है। बच्चियाँ सिर पर घुड़ला रखकर गाती हैं- 'घूड़लो घूमै छै जी घूमै छै'। यह गीत स्त्रियों के आनंद, उत्सव और सामूहिकता का प्रतीक है।

गणगौर पूजन के समय सबसे लोकप्रिय गीत है- 'खेलण दो गणगौर, भंवर म्हाने पूजण दो गणगौर।' यह गीत लगभग पूरे राजस्थान में गाया जाता है और गवर पूजा का अभिन्न अंग माना जाता है।

इसके अलावा अनेक क्षेत्रीय गीत भी प्रसिद्ध हैं, जैसे- गवरल रूडी है नजारी तीखो नैणां री, गवर गिणगौर माता खोल किंवाड़ीरा, बाड़ी-बाड़ी भंवरी भिणकै, ओ तो गहरी-गहरी विरमाजीरी छांवो बालक रसिया।

जैसलमेर क्षेत्र में गाए जाने वाले गवर गीतों में- बाए गवरादे, अयवसौ, आठ कपर री ई ठाणी, भोकावो विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं।

घुडले के गीत

राजस्थान की लोकपरंपराओं में घुड़ला उत्सव विशेष रूप से कन्याओं का त्योहार माना जाता है, जो गणगौर पर्व से जुड़ा हुआ है। इसके पीछे एक अत्यंत मार्मिक ऐतिहासिक कथा भी प्रचलित है। सन् 1548 (चैत्र कृष्णा 1, शुक्रवार) की घटना है — मारवाड़ के कोसाणा गाँव में कन्याएँ तालाब के पास गवर का पूजन कर रही थीं। तभी अजमेर के सूबेदार मल्लूखाँ ने उन 140 कन्याओं का अपहरण कर लिया। जब यह समाचार मारवाड़ के नरेश को मिला, तो उन्होंने तुरंत सेना भेजी। रावजी के सेनापति सारंगजी खींची ने युद्ध में घुड़ले खाँ को मार गिराया।

घुड़ले खाँ का शरीर तीरों से छलनी हो गया था; अंत में उसका कटा हुआ सिर सारंगजी ने उन कन्याओं को सौंप दिया। कन्याओं ने उस मुण्ड को गाँव-गाँव में घुमाकर उस अत्याचार की निंदा की और अपने आत्मसम्मान की विजय का प्रतीक बनाया। उसी ऐतिहासिक घटना की स्मृति में आज भी बालिकाएँ और स्त्रियाँ घुड़ले के गीत गाती हैं और मिट्टी के कुलड़े (घुड़ले) को दीपक सहित घुमाती हैं।

घुड़ले के प्रसिद्ध गीतों में शामिल हैं — घुडलो घूमै छै जी घूमै छै, जालोड़ी जऊ नीपलै रे बीरा, इंट तपै चकलो तपै, ऊँची मेड़ी ऊजकी रे रुण-झुरियों के। ये गीत कन्याओं द्वारा बड़ी श्रद्धा, उल्लास और जोश के साथ गाए जाते हैं। इनमें शौर्य, स्त्री-

सम्मान और सामाजिक चेतना का समन्वय दिखाई देता है।

जैसलमेर क्षेत्र में घुड़ले का एक विशेष रूप देखने को मिलता है। वहाँ प्रसिद्ध गीत — 'माट में माटोली घूमै, कोठी में जुवारा ए' बहुत लोकप्रिय है। यहाँ रात्रि में नहीं, बल्कि दिन के समय भी महिलाएँ और कन्याएँ मटकी में छेद कर दीपक रखकर सामूहिक रूप से घुड़ला घुमाती हैं। इस प्रकार घुड़ले के गीत राजस्थान के लोकजीवन में नारी शक्ति, स्वाभिमान और सांस्कृतिक चेतना के जीवंत प्रतीक बन गए हैं।

वर्षा के गीत

राजस्थान के शुष्क और अर्ध-मरुस्थलीय प्रदेश में वर्षा का विशेष महत्त्व रहा है। अकाल और सूखे की परिस्थितियाँ यहाँ की जीवन-शैली, कृषि और लोकसंस्कृति पर गहरी छाप छोड़ती हैं। इसी कारण राजस्थान में वर्षा से संबंधित लोकगीत, कहावतें और भावपूर्ण अभिव्यक्तियाँ प्राचीन काल से प्रचलित रही हैं।

राजस्थानी लोककथाओं और कहावतों में वषाज़ के महत्व को इस प्रकार व्यक्त किया गया है —

पग पूगळ, धड़ मैडते, बाँह जो बाहडमेर।

आयीगयो बीकानेर, हूँ ठावी जैसलमेर।

अर्थात् अकाल की दृष्टि बाड़मेर और बीकानेर पर रही, जबकि जैसलमेर में अकाल स्थायी माना जाता है।

सौ सांडियां, सौ करहला, पूत निपूती होय।

मेहड़ला बूढा भला, जे दुखियारण होय।

यहाँ यह दर्शाया गया कि चाहे संपत्ति और संतान नष्ट हो जाए, फिर भी वर्षा का होना जीवन के लिए आवश्यक है।

कुछ और प्रसिद्ध कहावतें हैं —

* चमकी भळी न चैतरी, बूंदो भलौ न जेठ।
* रूठी भली न राजवी, खूटौ भळो न सेठ।
* शुकरवार री बादळीं, रही सनीचर छाय।

इनमें मौसम और वर्षा के पैटर्न को स्थानीय अनुभव और कृषि जीवन से जोड़कर समझाया गया है।

वर्षा के गीत राजस्थान की लोकसंस्कृति में प्रचलित उल्लास और भावनाओं का प्रतीक हैं। प्रमुख गीत हैं — तेजी, पणिहारी, भूमक, पपैइयो, क सूंवी, सावण री तीज, सावण तो आयो सइयां, माहारी, आयल, बरसाळी, अब घर आवो कुळबन्द, बायरियो।

इन गीतों में वर्षा की प्रतीक्षा, खुशी और जीवन में उसके महत्व को सुंदरता से

व्यक्त किया गया है। उदाहरण के लिए गूवारी या गूगरी गीत में कहा जाता है —

वीरो म्हारी सावणियै रो मेह,

कोई भादरवै री मेह।

भी गाई आशा बीजलो जी म्हाराराज।

अर्थात् सावण माह की वर्षा की प्रतीक्षा में किसान और समाज दोनों ही उत्साहित रहते हैं।

लोकगीतों और कहावतों में राजस्थान के लोग वर्षा के पैटर्नज़, मौसम और कृषि कार्य का अनुभव साझा करते हैं। उदाहरण —

* विगनस पवन सूरियौ बाजैं, घड़ल पलक मांहै, मेहळी गाजै।

* चैत चिड़ पड़ौ, सावण निर भळौ।

* सासू जितरै सा सरी, आसू जितरै मेह।

इनमें वर्षा की भविष्यवाणी, कृषि तैयारी और जीवन की व्यावहारिक समझ छिपी हुई है।

वर्षा के गीत राजस्थान में केवल प्राकृतिक घटना का चित्रण नहीं हैं, बल्कि ये समाज के अनुभव, आशाएँ, भावनाएँ और जीवन की व्यावहारिक समझ का प्रतीक हैं। ये गीत किसानों, घर-गृहस्थों और स्त्रियों द्वारा उत्साहपूर्वक गाए जाते हैं और समाज में वर्षा के महत्व को संगीतात्मक रूप में प्रदर्शित करते हैं।

फाल्गुण के गीत

राजस्थान में फाल्गुण मास का पर्व होली से जुड़ा है। इस अवसर पर गाँव-गाँव और नगर-नगर में लोग चंग लेकर उल्लास और मस्ती में झूमते हैं, नाचते-गाते हैं। चंग पर भगवान कृष्ण और राधा के प्रेम के गीत गाए जाते हैं, साथ ही कई प्रकार के विनोदपूर्ण धमाके भी गाए जाते हैं।

घूमर राजस्थान का प्राचीनतम नृत्य है, जिसमें महिलाएँ नगाड़े के चारों ओर वृत्ताकार होकर नाचती और गाती हैं। इसमें ताल-लय और ठेका विशेषकर दादरे का रखा जाता है।

जैसलमेर के प्रसिद्ध घूमर गीत हैं —

1. मनै थे खींचीडै मति पठनाए म्हारी माय, घूमर घरका म्हे आतसां।
2. मनै खींचीडी खीच खीडावै म्हारी माय, घूमर...
3. मनै देवड़ा नै मति परणाए म्हारी माय, घूमर...
4. मनै देवड़ा जेवड़ा बटावै म्हारी माय, घूमर...
5. मनै थे भारी डैनै मति परनाए म्हारी माय, घूमर...
6. मनै भाटीजी भाठी फोडावै म्यारी माय, घूमर...

7. मनै थे राथोडां नै भल परनाए म्हारी माय, घूमर...

8. मनै राठोडा राज करावै म्हारी माय, घूमर...

जैसलमेर की घूमरें परंपरागत रूप से आज भी प्रचलित हैं। नगाड़ची (ढोल बजाने वाला) परिवार के उन व्यक्तियों में से होता है जिनकी बहन या पत्नी घूमर नृत्य में भाग लेती है।

अन्य घूमर गीत और नृत्य रूप के अन्तर्गत जैसलमेर में कठडो, ओ ठीडो, नींबूडो, ओडणी, बिछियो, जियामोंजी, घूमर आवै घूमती आदि गीत बड़े रोचक और प्रसिद्ध हैं।

जब महिलाएँ थक जाती हैं, तो युवा-पुरुष डांडिया लेकर नगाड़े के चारों ओर गाते-नाचते हैं, जिसे डांडिया नृत्य कहते हैं।

इसके अतिरिक्त घूमर के अन्य रूप हैं —

* **लूर-नृत्य** : प्राय: राजपूत स्त्रियाँ करती हैं।
* **झूमरियो** : बालिकाओं द्वारा किया जाने वाला घूमर।
* **गींदड़** : शेखावाटी क्षेत्र में डांडियों के साथ होने वाला नृत्य।

फाल्गुण और होली के अवसर पर गाए जाने वाले ये गीत और नृत्य राजस्थान के लोकजीवन की ऊर्जा, सामूहिक उल्लास और सांस्कृतिक विविधता का प्रतीक हैं। ये गीत स्त्रियों, बालिकाओं और युवाओं के उत्साह और सामाजिक एकता को संगीतात्मक रूप में दर्शाते हैं।

लोक नाट्य

राजस्थान की लोक संस्कृति में लोक-नाट्य का बड़ा महत्व है। इसे यहाँ 'रम्मतें' कहा जाता है और यह विशेषकर फाल्गुण महीने में आयोजित होती हैं।

रात्रि के समय गाँव या मोहल्ले के खुले स्थान पर लोग एकत्र होते हैं। इस स्थल को वृत्ताकार बैठने के कारण 'कूँडा' कहा जाता है। इसमें भाग लेने वाले कलाकारों को खेलार कहा जाता है।

लोक-नाट्य में प्राय: धार्मिक, ऐतिहासिक या पौराणिक चरित्रों का जीवन प्रस्तुत किया जाता है। इसे कई रूपों में वगीकृत किया जा सकता है — (1) भरतरी री रम्मत, (2) अमरसिंह री रम्मत, (3) सती-सावित्री री रम्मत।

जब किसी नायक के जीवन का कोई विशेष अंश नाट्य-रूप में प्रदर्शित किया जाता है, उसे 'ख्याल' कहा जाता है। उदाहरण — ख्याल मूमल मेहदरे री, ख्याल सुलतान री।

रम्मतें पद्य और गीतमय होती हैं; गद्य का कोई स्थान नहीं होता। नायक अपने हिस्से के गीत या दोहा प्रस्तुत करता है, जिसे समीप बैठे झुण्ड के लोग जोर-जोर से गाते

हैं। इसे 'टेरिया' कहा जाता है।

ख्यालों की परंपरा हर वर्ष नए ढंग से विकसित होती है। इनमें सामाजिक कुरीतियाँ, राजनीतिक विषमताएँ और धार्मिक विचार भी प्रकट किए जाते हैं।

शेखावाटी क्षेत्र में ख्यालों का विशेष प्रकार प्रचलित है, जो प्राय: पेशेवर मंडलियों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इसकी गायकी ऊँचे दर्जे की और सरस होती है। राजस्थान के अन्य भागों में भी भाचा, तुर्रा कलंगी आदि लोक-नाट्य विधाएँ प्रसिद्ध हैं।

लोरियाँ

राजस्थान में लोरियाँ बच्चों को सुलाने और उन्हें सुखद निद्रा प्रदान करने के लिए गाए जाने वाले मधुर और सरस गीत हैं। इन्हें स्थानीय भाषा में 'टीलो' भी कहा जाता है।

कुछ लोकप्रिय लोरियाँ (श्री देवेन्द्र सत्यार्थी के संग्रह अनुसार) हैं:

1. हीळो हालो करै रे, सूआ, आडणियां टोपलिया लावै रै भूआ।

यहाँ सामाजिक चित्र है: माँ अपने बच्चे को लोरी सुना रही है, जबकि उसकी ननद ने भतीजे के जन्मोत्सव पर कपड़े नहीं लाए।

2. आयै रो गुड खायै रो, नानोजी देसै मायरो।

रीति-रिवाज पर आधारित: ननिहाल वालों की तरफ़से विवाह और जन्मोत्सव में मायरे का प्रचलन।

3. होरे हो... तानै मांमै भारीगो, गो कागळा ले गया।

हास्य-व्यंग्य: बच्चे के मामा ने एक गौ को मार दिया, जिसे कौआ ले गया।

4. सुरेसनै रमावै एक घड़ी, बैनै देवां सोने री घड़ी।

जन्मोत्सव की महत्ता: बच्चे को खुश करने वाले को पुरस्कार दिए जाते हैं।

5. हीळी हाळो दौड़ रे कुत्ता, बांणियै री हट्टनै फाड़ रे कुत्ता।

सामाजिक व्यंग्य: कंजूस व्यापारी की प्रवृत्ति का विरोध।

6. आरे मनोजियां, कर बातां, ऊनी-ऊनी खिचड़ी में घी घातां।

माँ की इच्छा: बच्चा उनसे बातें करे और प्यार से खिलाया जाए।

7. पगलै पा... सेर घी खा...

जब बच्चा चलना सीखता है, तो माता उसे प्यार और पोषण देती है।

लोरियाँ केवल बच्चों को सुलाने का साधन नहीं हैं। ये सामाजिक जीवन, रीति-रिवाज, हास्य-व्यंग्य और पालन-पोषण की परंपराओं का भी प्रतिनिधित्व करती हैं। राजस्थानी दोहा इसे सारगर्भित रूप में दर्शाता है:

इला न देणी आपणी, हालरियो हुलराय।
पूत सिखावै पालणै, मरण बड़ाई माय।*

अर्थात् माता-पिता अपने बच्चों को सिखाते हैं और उन्हें पालते हैं, और यही लोरियाँ दर्शाती हैं।

पहेली

राजस्थान में पहेलियों को स्थानीय भाषा में 'आडियाँ' कहा जाता है। ये केवल मनोरंजन, आनन्द या मौज का साधन नहीं हैं, बल्कि व्यक्ति के बौद्धिक स्तर, तर्क्शक्ति और समझदारी का सहज परीक्षण भी प्रस्तुत करती हैं। राजस्थान की लोककथाओं में उल्लेख मिलता है कि कभी-कभी राजकुमारी अपनी शादी उसी व्यक्ति से करती थी, जो पहेली का सही उत्तर देता था। इस प्रकार, पहेलियाँ समाज में सौंदर्य, मनोरंजन और सामाजिक परीक्षण का एक माध्यम भी रही हैं।

आज भी गाँवों में जब दामाद अपनी ससुराल जाता है, तो सालियाँ और अन्य रिश्तेदार हँसी-मजाक के साथ उससे पहेलियाँ पूछती हैं। यह रीति, लोकसंस्कृति और पारिवारिक परंपरा का अभिन्न हिस्सा है।

प्रमुख उदाहरण :-

1. आटे जिसी गिलगिळी, पतासे जिसी मीठी।

   उत्तर: किसमिस

   यह पहेली सरल शब्दों में चीज़ों के स्वरूप और स्वाद के आधार पर हल करने की क्षमता को दर्शाती है।

2. छोटी सी कछड़ी, मोत्यां जड़ी। राजाजी रै बाग में, दुशाळो ओढ़ खड़ी।

   उत्तर: मक्की का भुट्टा

   यहाँ प्रतीकों और वस्तुओं के विश्लेषण से उत्तर निकालने की क्षमता पर जोर है।

3. छोटी-सीम की भली, राजा भेळी जीमली

   उत्तर: मक्खी

   यह पहेली सूक्ष्म निरीक्षण और कल्पनाशक्ति को बढ़ावा देती है।

निष्कर्षत: कह सकते हैं कि राजस्थान की लोकसंस्कृति में गीत, नाटक, लोरियाँ और पहेलियाँ न केवल मनोरंजन और उत्सव का माध्यम हैं, बल्कि ये सामाजिक जीवन, परंपरा, अनुभव, ज्ञान, सौंदर्य और बौद्धिक क्षमता को जीवंत रूप में संजोते हैं। यह संस्कृति ग्रामीण जीवन और मानवीय भावनाओं का वास्तविक, बहुआयामी और अमूल्य दस्तावेज है।

❑❑❑